मनुष्य जन्म का उद्देश्य

❑ समग्र सृष्टि के अधीश्वर भगवान को भूल के हम लोग वस्तुजगत् को लेकर मस्त रहते हैं। इतना कुछ पाने के बाद भी हम लोगों का अभाव मिट नहीं रहा है। पार्थिव जगत् का राजा भरपूर संपत्ति का मालिक है लेकिन उसका भी अभाव रह जाता है। भगवान सर्वशून्य होकर भी पूर्ण हैं और मनुष्य पूर्ण होकर भी शून्य है।

❑ ज्ञान-शक्ति, विद्या-बुद्धि, रुपया-पैसा, धन-सम्पत्ति कुछ भी मन को शांति नहीं दे सकते। यहाँ तक की समग्र पृथ्वी के मालिक बन जाने से भी मन की शांति नहीं होगी। विषयज्ञान से अशान्ति, बंधन और भवव्याधि; उधर आत्मज्ञान से मुक्ति, आनन्द और चिरशांति।

❑ वस्तुजगत् में वस्तुलाभ के लिए मनुष्य जितना परिश्रम/मेहनत करता है उसका एक चौथाई हिस्सा भी ईश्वर/आत्मा प्राप्ति के लिए नहीं लगता। इंसान हर वस्तु के लिए प्रयत्नशील हो सकता है, लेकिन अध्यात्मपथ के लिए बहुत बहाने बनाता है।

❑ आत्मा सतत संप्राप्तिस्वरूप है। आत्मा सर्वदा के लिए प्राप्त है, लेकिन अविद्या अज्ञानवश वह अप्राप्त प्रतीत होता है। वह प्राप्तव्य, ज्ञातव्य, ज्ञेय नहीं है—वह केवल ज्ञानस्वरूप है। अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति के लिए कर्म, ज्ञान आदि की आवश्यकता है, परन्तु आत्मा के लिए साधन का कोई प्रयोजन नहीं है। अनात्मवस्तु की प्राप्ति के लिए साधन का प्रयोजन है; उसके लिए ज्ञान, कर्म या जानना, परन्तु आत्मा के लिए सिर्फ़ मानना। स्वबोध विहीन कल्पना ही है अविद्या अज्ञान। अविद्या अज्ञान से एक अखण्ड आत्मा ही अनंत-अनंत, पृथक-पृथक रूप से प्रतीत होता है।

❑ स्वयं को भूलकर अर्थात् अपने स्वरूप को भूलकर ख़ुद को कर्ता-भोक्ता-ज्ञाता समझकर संसार में रहना ही है आत्महत्या यानी स्वयं को भूलना ही है आत्महत्या। आत्मविस्मृति ही है आत्महत्या। अविद्या अज्ञानजात बुद्धि के विकार से अनात्मप्रीति और आत्म-विस्मृति होती है। आत्मप्रीति द्वारा अनात्मप्रीति नाश होती है। आत्मा को मानना ही है आत्मप्रीति और अनात्मा को न मानना ही है अनात्मा का नाश।

❑ ब्रह्म-आत्मा ही है सच्चिदानन्दस्वरूप। उसके अलावा बाकी सब बेमतलब हैं, चाटुवाक्य हैं। मनुष्य इन्हीं चाटुवाक्यों के फेर में ही घूमता रहता है। असली बातों के आस-पास भी नहीं जाता। प्रत्येक मनुष्य अपने सृष्ट जगत् में कामना, वासना और भोग की इच्छा लेकर घूमता रहता है। ''त्वं'' और ''तत्'' की बात एकबार भी नहीं सोचता है। त्वं का अर्थ है कि तुम जीव होकर भी शिव हो। तत् का अर्थ है—सो हूँ अर्थात् मैं ही वही हूँ।

❑ इस जीवन में सबसे मूल्यवान बात क्या है, जानते हो? हमारा जन्म दुःखभोग करने के लिए नहीं हुआ है, न ही आराम या सुखभोग करने के लिए, बल्कि हमारे असली परिचय की उपलब्धि करने के लिए हुआ है। वह असली परिचय क्या है? हम सत्-चित्-आनन्द स्वरूप हैं, अमृत-मुक्ति-शांति स्वरूप हैं। ऋषियों की वाणी के अनुसार यही आत्मस्वरूप, स्वबोधस्वरूप है।

❑ सृष्टितत्व की व्याख्या करते हुए अद्वैतवादीगण कहते हैं कि हमारा पहला अपराध क्या है? मैंने जब ख़ुद को अलग समझके भावना की अर्थात् अहंकार द्वारा ख़ुद को मैंने जो देह-बुद्धि युक्त मैं समझा वह है कच्चा मैं। मैंने अपनी पूर्णता को स्वीकार नहीं किया। बाद में पूर्णता के लिए अहंकार द्वारा कल्पित साधना की। अहंकार का व्यवहार पहले या बाद में कल्पना से जनम लेता है। कल्पना से कल्पना ही पैदा होती है, चिन्ता से चिन्ता ही उत्पन्न होता है। अचिन्त्य आत्मस्वरूप को चिन्ता करके अहंकार भजना चाहता है। कल्पना का फल कल्पना ही है। आत्मा के साथ कल्पना और चिन्ता का कोई संपर्क नहीं है।

❑ आत्मबोध का तात्पर्य है निजबोध। आत्मा नित्य-अद्वैत (नित्याद्वैत) है, जिसका व्यवहार है निजबोध। निजबोध में ही आत्मा नित्यसिद्ध है, दूसरा कोई बोध उसमें असिद्ध है। आत्मज्ञपुरुष की सर्वानुभूति का लक्षण है निजबोध, अपनबोध, स्वबोध। स्वबोध आत्मा ही है अखण्ड परमतत्व, प्रज्ञानघन सच्चिदानन्द। केवल 'पक्का मैं' ही है उसका परिचय।

❑ जीवन भर न पुकार कर, केवल मृत्युकाल में हरि का नाम लेकर पुकारने से क्या फ़ायदा? समय रहते कम उम्र में हरि का नाम लेकर थोड़ी जमा पूंजी रखनी चाहिए। यौवन में बैंक में अगर कुछ नहीं जमाओगे तो जीवन के अंत में पांच रुपये रखकर कितना ब्याज पाओगे?....

❑ शरीर व्यक्तिगत भोग के लिए नहीं बना है। ये आत्मबोध की साधना के लिए, मातृयज्ञ में आहुति देने के लिए, गुरुबोध में सेवा के लिए एवं चिदानन्द का आधार बनने के निमित्त तैयार हुआ है। केवलमात्र सद्गुरु निर्देश पालन द्वारा ही इसका यथार्थ व्यवहार होता है।

❑ ईश्वर ने तुम्हें ज़बान दी है उनका गुणगान करने के लिए, बहादुरी लेने के लिए नहीं, दूसरों की निन्दा और चर्चा करने के लिए भी नहीं। आँखें दी हैं सर्वरूप में उनके दर्शन के लिए। कान दिए हैं उनकी महिमा सुनने के लिए, छिपके दूसरों की बातें सुनने के लिए नहीं। इन्द्रिय दिए हैं उनकी सेवा के लिए, अपने भोग में व्यवहार करने के लिए नहीं।

©Saccidananda Society

❑ निजबोधरूपी सच्चिदानन्दविग्रह है परमात्मा 'पक्का मैं'। उसमें कोई मेरा भाव का व्यवहार नहीं है। केवल स्वबोध में साक्षीस्वरूप हैं वे। परमात्मा का मैं, स्वभाव युक्त होकर ईश्वर बोध में अपने को व्यवहार करता है। उनका एक मेरा भाव का व्यवहार भी है। उसी का एक अंश जीवलोक में जीव का मैं अर्थात् कच्चा मैं अहंकार रूप से अपने को व्यवहार करता है। अहंकार का निजी व्यवहार है मेरा भाव का व्यवहार, इसलिए निजबोध व्यवहार के तीन रूप हैं—(१) 'पक्का मैं' है मेरा भावशून्य (२) ईश्वर का मैं है अनंत मेरा भावयुक्त और (३) जीव का मैं है ससीम शांत मेरा भावयुक्त। निजबोध के तीन रूपों के संबंध में यथार्थ धारणा न होने से अविद्या अज्ञान मुक्त नहीं हुआ जा सकता है।

मेरा बोध का अंश है मैं बोध का प्रतिभास, आभास और छाया। वह है अव्यक्त प्रकृति का व्यक्त रूप। अव्यक्त का स्वरूप द्विविध है—पहला, त्रिगुणा प्रकृति की साम्य अवस्था, जो है सर्व कार्य का कारण रूप। इसको भी अव्यक्त कहते हैं। इस अव्यक्त से कार्य व्यक्त होता है, फिर अव्यक्त में ही लीन हो जाता है। दूसरा अव्यक्त है अखण्ड भूमा पूर्ण। परम अव्यक्त के प्रसंग में वेदवाणी है—''पादस्य विश्व भूतानि त्रिपाद अस्य अमृतं दिवी'' अर्थात् द्वितीय अव्यक्त के एक पाद में समग्र विश्वभुवन व्यक्त है, बाकी तीन पाद हैं अमृतस्वरूप नित्य अव्यक्त। प्रथम पाद का पाद है द्वैत भावबोध का प्रसंग। प्रथम पाद है द्वितीय पाद की स्वभाव प्रकृति। जीव के देह से बुद्धि तक सब ही स्वभावजात और स्वभाव के अंतर्भुक्त है। देह से बुद्धि एवं उसके परे अव्यक्त तक है द्वैत भावबोध का व्यवहार। अव्यक्त के पार है अद्वैत का अधिष्ठान।

अव्यक्त का अर्थ है अप्रत्यक्ष या अप्रकट, जो दो प्रकार का है। एक है सृष्टि का प्रधान कारण जिसमें से बहुविध सृष्टि बारंबार आविर्भूत होती है, जारी रहती है और अंत में विलीन हो जाती है। यह सब चक्रीय आकार से होता है। दूसरा अव्यक्त है 'परमअव्यक्त एक' जिसका कल्पित एक चौथाई भाग ही है पहला अव्यक्त और शेष तीन चौथाई भाग नित्यकाल के लिए अद्वैत और अव्यक्त रहता है जो ब्रह्मात्मतत्व का सत्य स्वरूप है अर्थात् अखण्ड मैं-तत्व है।

मेरा बोध है द्वैत, मेरा शून्य मैं बोध है अद्वैत या ईश्वरात्मबोध। मेरा बोध के व्यवहार से होता है शोक, लेकिन ईश्वरात्मबोध होने से मिलती है शक्ति। अपनी तुष्टि के लिए व्यवहार से होता है भोग, ईश्वरात्मा के लिए व्यवहार हो तो वही भोग है भक्ति। सिर्फ़ व्यक्तिगत अपने लिए जो व्यवहार है वह है अज्ञान, ईश्वरात्मा के लिए व्यवहार है ज्ञान। सिर्फ़ व्यक्तिगत अपने लिए व्यवहार हो तो वह है मिथ्या, ईश्वरात्मा के लिए व्यवहार है सत्य। अपने लिए व्यवहार से मिलता है दुःख, ईश्वरात्मा के लिए व्यवहार से मिलता है सुख।

❑ रात को सोने से पहले थोड़ा ध्यान कर लेना, भगवान (ईश्वर-आत्मा-ब्रह्म-पक्का मैं) के नाम और भाव से भगवान में ही विश्राम कर लेना, अज्ञान में विश्राम न करना। फिर सुबह उठकर उन्हीं का नाम लेकर काम शुरु करना। कर्म उनके लिए ही करना, व्यक्तिगत अपने लिए नहीं। ....जो कुछ आँखों से दर्शन करो सबमें उन्हींको ही जानना, उन्हींको ही मानना। जो कुछ कान से सुनो उसमें उन्हीं को मानो, जो भी विचार अन्दर उत्पन्न होते हैं, उसमें भी वही हैं। जो कुछ अनुभव करोगे, उसमें भी वही हैं।

©Saccidananda Society